लेखकका निवेदन

'विवेक और साधना' बडी पुस्तक है। असुमें तात्त्विक, धार्मिक, भक्ति तथा योग-सम्बन्धी और सामाजिक आदि अनेक गंभीर तथा सामान्य लोगोंको समझनेमें कठिन मालूम हों अैसे विषय हैं। अुन्हें समझनेके लिअे अुन विषयोंका बहुत पूर्व-अभ्यास आवश्यक है। सबकी अितनी तैयारी नहीं होती। फिर भी जीवनको अुन्नत बनानेवाले सद्वाचनमें अुन्हें रस होता है। अत बहुत दिनोंसे मेरी यह अिच्छा थी कि अैसे लोगोंको आसानीसे समझमें आ जायं अैसे मूल पुस्तकके कुछ प्रकरणोंकी छोटी पुस्तिकाअें छापी जाय। कुछ मित्रोंने भी अैसी सूचना की थी। यह बात श्री जीवणजीभाअीके सामने रखते ही अुन्होंने अिसे स्वीकार कर लिया और थोडे समयमें ही यह काम पूरा कर दिया। अिससे मुझे बडा आनन्द होता है।

यह पुस्तिका प्रसिद्ध करनेका मेरा मूल अुद्देश्य पूर्ण करना पाठकोंके हाथमें है। मेरा विश्वास है कि पाठक अिसे पूर्ण करेंगे।

१२-११-'६० केदारनाथ

१

मनुष्योचित सुख और अुसकी प्राप्तिका मार्ग

सच्चे-झूठे सुखकी परीक्षा

सभी मनुष्य सुखकी अिच्छा करते हैं। परन्तु यह पता लगाना कठिन है कि अुनमें से कितनोंको सच्चा सुख मिलता है। मनुष्य सुखकी आशामें ही जीवन बिताता है। वह न मिलनेके कारण अुसे समय-समय पर निराश भी होना पड़ता है। यदि मनुष्य अपनी बुद्धिका ठीक तरहसे अुपयोग करे और अुसकी समझमें आ जाय कि सुखके लिअे सचमुच क्या करना चाहिये, तो अिसमें सन्देह नहीं कि अिसी जीवनमें वह स्वयं सुखी होकर दूसरोंको भी सुखी करेगा। अिसके लिअे अुसे सबसे पहले यह साफ समझ लेना चाहिये कि हम मनुष्य हैं और मनुष्योचित सुखके लिअे जन्मे हैं। अुसे चाहे जिस तरह सुखी होनेकी आशा, अिच्छा या विचार भी छोड़ देना चाहिये। अुसे मनुष्योचित सुखके अलावा और सब सुखोंका त्याग करना सीखना चाहिये। छोटे सुखका त्याग किये बिना हम अूंचे दर्जेके सुखके लायक नहीं बन सकते। आप अपना जीवन अिस ढंगसे बितानेकी अिच्छा और दृढ़ संकल्प करेंगे और अुसे पूरा करनेका अुचित प्रयत्न करेंगे, अुसी प्रकारका जीवन प्राप्त कर सकेंगे। कारण, अिस प्रकारकी शक्ति आपमें है। वह शक्ति आज सुप्त हो, अुसका आपको भान न हो, तो भी अिसमें शंका नहीं कि वह आपमें है। अुसे केवल जाग्रत करने भरकी देर है। सज्जन और दुर्जन, अुद्यमी और आलसी, मेहनती और मुफतखोर, परोपकारी और दुष्ट, प्रामाणिक और अप्रामाणिक, सत्यवादी और सत्यकी परवाह न करनेवाले, साफदिल और कपटी — सब तरहके आदमी अिस दुनियामें हैं। वे अिसी दुनियामें अपना जीवन बिताते हैं और निर्वाह करते हैं। जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेकी अिच्छा हो, अुसी प्रकारका जीवन बितानेकी अिस संसारमें गुंजाअिश है। सब अपने-अपने ढंगसे अपनेको सुखी भी मानते होंगे। परन्तु मनुष्योचित सुख किसको मिलता होगा, यह अेक बड़ा सवाल है। सब

अनुक्रमणिका

मनुष्य अैसे सुखके पीछे पड़ता है, जो मानवताको शोभा नहीं देता, तो अुसे सुख न मिलता हो सो बात नहीं। वह मिलता तो है ही। परन्तु वह सुख अितना क्षणिक होता है और आगे-पीछे वह अिस तरह दु:खमें परिणत हो जाता है कि अुसे सचमुच सुख कहा जाय या नहीं, अिसमें शंका ही है।

हम सब बुद्धिमान हैं फिर भी अिस प्रकारके सुखके पीछे पड़े हुअे हैं। हममें बुद्धि है परन्तु अुसका अुपयोग हम विवेक बढ़ानेमें नहीं करते। हममें अहंकार है परन्तु मानवताका अैसा अभिमान नहीं जिससे आत्म-गौरव बढ़े। अिसके बजाय हम विवेकका विकास करके जीवन-सम्बन्धी बढ़ते हुअे अनुभव परसे सच्चे सुखको तलाश और परख करें और अपनी सारी शक्ति और बुद्धिका अुपयोग अुसीकी प्राप्तिके लिअे करें, तो हम मानवोचित सुखके अधिकारी होंगे।

विवेकरहित जीवन-प्रवाह

संगति, वातावरण, परिस्थिति, आदर्श आदिके कारण अेक बार हमारी जिस प्रकारकी जीवन-पद्धति बन गअी है, हमारे विचारोंका रवैया जिस प्रकारका बन गया है, हमारी अिन्द्रियों पर चंचलता, लोलुपताके जो संस्कार पड़ गये हैं, अुन सबके कारण जीवनके दूसरे पहलूका विचार करनेकी हमें कभी कल्पना तक नहीं आती और अुस दिशामें हमारी शक्ति कभी जाग्रत नहीं होती। सुखके लिअे सतत प्रयत्न करते हैं, फिर भी हमें सुख, शांति और संतोष क्यों नहीं मिलते; जीवन बितानेकी कोअी और पद्धति है या नहीं, अिसका विचार भी हमें कभी नहीं सूझता। अिसका कारण यह है कि अुस दृष्टिसे हम बुद्धिका कभी अुपयोग ही नहीं करते। जीवनमें हमेशा दु:ख, चिन्ता और अुद्वेग सहन करते हुअे भी हमें कभी यह शक नहीं होता कि हमारे विचारोंमें, हमारी जीवन-पद्धतिमें कोअी दोष होगा। हमारे आसपासका वातावरण भी अैसा ही होता है। अिसलिअे आदर्श विचार और आदर्श जीवन सुनने या देखनेको नहीं मिलते और अिस तरहके विचार और जीवनके साथ अपने विचारों और जीवनकी तुलना करनेका मौका भी नहीं मिलता। अिसलिअे हमारे दोष हमारे ध्यानमें नहीं आते। हम शुद्ध विचार नहीं करते और हमारी परिस्थिति भी अैसी नहीं होती

परन्तु क्रोधके कारण होनेवाले दुःख प्रेमसे, दुःख अुदारतासे, स्वार्थीपनका परिणाम निः सयमसे मिटानेकी बात हमें नही सूझती।

हमारे जिन दोषोंके अनिष्ट परिणाम पड़ते हैं, अुनके लिअे हमें पछतावा हुअे छुटकारा नही हो सकता। अितना ही नही, हाथों बार-बार होते है और हमें तथा दूसरोंको दुःखको टालना हो तो हमें अपने दोष पहले सीधी-सादी बात बुद्धिमान कहलाने पर भी हमार यह समझते हुअे भी कि अपने क्रोधके कारण दुःखी होते है, अपनी लोभवृत्तिके कारण हम निर्लोभतासे, अुदारतासे ये दुःख और कठिनाअियां बजाय हम अुलटे पहलेसे ज्यादा क्रोधी और लोभी प्रयत्न करते हैं। क्रोधके दुष्परिणाम दिखाअी क्रोधी स्वभाव पर अभिमान करते है। अपने दुष्ट बनकर और कपटके परिणाम अधिक कपटी हमारी कोशिश होती है। यही स्थिति अन्य सब मोह, स्वार्थ वगैरा बातोमें पाअी जाती है। अपने हम यह कहते है कि औरोंको निर्दोष होना चाहिये। मानते हैं कि दुःखका कारण हमारे अपने ही दोष या समाजमें जो दुःख दिखाअी देते है या हमें पड़ते हैं, अुनका कारण है दूसरोको ही दोषी मनका ह्रास होना। अिस पर भी हमें अपने दोष हम यह साबित करनेकी चेष्टा करते हैं कि वे दोषकी प्रतिक्रिया या परिणाम हैं।

अेक दुर्गुणका परिणाम दूसरे दुर्गुणके जरिये मिटानेव हम दोषोंकी ही सख्या बढ़ाते है और अैसी अिच्छामात्र

और हमारा कुटुम्ब सुखी रहे। यह

सुखमें है। हम सभी अिस भ्रांतिमें है, f

सुख हमारा समाज सभी दुःख भोगते हैं।

सुखका ही विचार करते हैं, दूसरोंके सुख-दुःखका नहीं। मानवीय सुख केवल अपने अकेलेके सुखका विचार करने या अुसके लिअे प्रयत्न करनेसे नहीं मिल सकता। यह मानव-धर्मकी प्रारंभिक बात भी हम अभी तक नहीं जानते। यह निश्चित है कि मनुष्य जब तक मानवोचित सुखके पीछे नहीं पड़ता, अुसके लिअे आवश्यक प्रयत्न नहीं करता, तब तक वह सुख प्राप्त नहीं कर सकता। केवल व्यक्तिगत सुखका विचार करके प्राप्त किया हुआ सुख थोड़े ही समयमें दुःखका रूप ले लेता है। और किसी समय यदि अैसा न भी हो, तो वह सुख मनुष्यको शोभा देनेवाला नहीं होता। अिसीलिअे यदि शोभा देनेवाला सुख चाहिये, तो हमें सबके सुखका विचार करना चाहिये। सबको सुखी बनानेका प्रयत्न करना ही मानवोचित सुखका सच्चा अुपाय और मार्ग है। हमारा जीवन हमारा अकेलेका नहीं है। हमारी सब तरहकी शक्ति और बुद्धि सबके लिअे है और सबके सुखकी अिच्छामें ही हमारा सच्चा सुख है। जिस अिच्छाके अनुसार किये गये प्रयत्नसे हमें जिस सुखका लाभ होगा, वह मनुष्यको सुशोभित करनेवाला और अुसका गौरव तथा मानवताका महत्त्व बढ़ानेवाला सच्चा सुख है। मानव-धर्मका यह रहस्य समझकर हमें यह बात अपने हृदयमें मजबूतीसे जमा लेनी चाहिये।

मानवीय सुखकी अभिलाषा

हम मनुष्य हैं तो केवल अपनी क्षुद्र वासना या अिच्छाअें पूरी करके अपने देहको सुखी करनेके लिअे नहीं, बल्कि मानव-धर्म पर चलकर सबको सुखी देखनेके लिअे हैं। अिसीलिअे हमें निर्दोष और सद्गुण-संपन्न होनेकी जरूरत है। निर्दोषताके बिना सद्गुणोंका पूरा विकास नहीं हो सकता, प्रभाव नहीं पड़ता। सद्गुणी होनेका अर्थ ही यह है कि हम दूसरोंके साथ समरस होकर अुनके सुख-दुःखका विचार करें, स्वयं दुःख और मुसीबत अुठाकर दूसरोंको सुखी करनेकी कोशिश करें तथा अुनके साथ सहानुभूतिका बरताव करें। अैसा करनेसे ही हमारे आत्मभावका विकास होता है। कौटुम्बिक, सामाजिक, राष्ट्रीय — प्रत्येक क्षेत्रमें जहां-जहां दूसरोंके साथ हमारा संबंध हो, वहां सर्वत्र हमारे सद्गुणोंके कारण हमारा आत्मभाव विकसित होता रहना चाहिये। अिस आत्मभावमें ही सारे

परन्तु क्रोधके कारण होनेवाले दुःख प्रेमसे, लोभके कारण होनेवाले दुःख अुदारतासे, स्वार्थीपनका परिणाम निःस्वार्थतासे और मोहके फल संयमसे मिटानेकी बात हमें नहीं सूझती।

हमारे जिन दोषोंके अनिष्ट परिणाम हमें और दूसरोंको भुगतने पड़ते हैं, अुनके लिये हमें पछतावा हुअे बिना अिन दोषोंसे हमारा छुटकारा नहीं हो सकता। अितना ही नहीं, परन्तु वे ही दोष हमारे हाथों बार-बार होते हैं और हमें तथा दूसरोंको सदा दुःखी बनाते हैं। यदि दुःखको टालना हो तो हमें अपने दोष पहले दूर करने चाहिये। यह सीधी-सादी बात बुद्धिमान कहलाने पर भी हमारी समझमें नहीं आती। यह समझते हुअे भी कि अपने क्रोधके कारण हम खुद और दूसरे भी दुःखी होते हैं, अपनी लोभवृत्तिके कारण हम कठिनाअीमें पड़ते हैं, प्रेमसे, निर्लोभतासे, अुदारतासे ये दुःख और कठिनाअियां दूर करनेके प्रयत्नके बजाय हम अुलटे पहलेसे ज्यादा क्रोधी और लोभी बनकर सुखी होनेका प्रयत्न करते हैं। क्रोधके दुष्परिणाम दिखाअी देने पर भी हम अपने क्रोधी स्वभाव पर अभिमान करते हैं। अपने दुष्टताके परिणाम ज्यादा दुष्ट बनकर और कपटके परिणाम अधिक कपटी बनकर दूर करनेकी हमारी कोशिश होती है। यही स्थिति अन्य सब विकारों और अज्ञान, मोह, स्वार्थ वगैरा बातोंमें पाअी जाती है। अपने दोष मिटाये बि[ना] हम यह कहते हैं कि औरोंको निर्दोष होना चाहिये। हम शायद ही य[ह] मानते हैं कि दुःखका कारण हमारे अपने ही दोष हैं। हमारे कुटु[म्ब] या समाजमें जो दुःख दिखाअी देते हैं या हमें खुद जो दुःख भोग[ने] पड़ते हैं, अुनका कारण है दूसरोंको ही दोषी माननेकी तरफ हमा[रे] मनका रुख होना। अिस पर भी हमें अपने दोष स्वीकार करने पड़ें, [तो] हम यह साबित करनेकी चेष्टा करते हैं कि वे दूसरोंके किसी ब[डे] दोषकी प्रतिक्रिया या परिणाम हैं।

अेक दुर्गुणका परिणाम दूसरे दुर्गुणके जरिये मिटानेकी कोशिश कर[के] हम दोषोंकी ही संख्या बढ़ाते हैं और अैसी अिच्छामात्र करते हैं कि ह[म]

सबके सुखमें हमारा सुख

और हमारा कुटुम्ब सुखी रहे। यह बहुत बड़ी भ्रां[ति] है। हम सभी अिस भ्रांतिमें हैं, अिसलिअे हम औ[र] हमारा समाज सभी दुःख भोगते हैं। हम केवल अप[ने]

सुखका ही विचार करते हैं, दूसरोंके सुख-दुःखका नहीं। मानवीय सुख केवल अपने अकेलेके सुखका विचार करने या अुसके लिअे प्रयत्न करनेसे नहीं मिल सकता। यह मानव-धर्मकी प्रारंभिक बात भी हम अभी तक नहीं जानते। यह निश्चित है कि मनुष्य जब तक मानवोचित सुखके पीछे नहीं पड़ता, अुसके लिअे आवश्यक प्रयत्न नहीं करता, तब तक वह सुख प्राप्त नहीं कर सकता। केवल व्यक्तिगत सुखका विचार करके प्राप्त किया हुआ सुख थोड़े ही समयमें दुःखका रूप ले लेता है। और किसी समय यदि अैसा न भी हो, तो वह सुख मनुष्यको शोभा देनेवाला नहीं होता। असीलिअे यदि शोभा देनेवाला सुख चाहिये, तो हमें सबके सुखका विचार करना चाहिये। सबको सुखी बनानेका प्रयत्न करना ही मानवोचित सुखका सच्चा अुपाय और मार्ग है। हमारा जीवन हमारा अकेलेका नहीं है। हमारी सब तरहकी शक्ति और बुद्धि सबके लिअे है और सबके सुखकी अिच्छामें ही हमारा सच्चा सुख है। अिस अिच्छाके अनुसार किये गये प्रयत्नसे हमें जिस सुखका लाभ होगा, वह मनुष्यको सुशोभित करनेवाला और अुसका गौरव तथा मानवताका महत्त्व बढ़ानेवाला सच्चा सुख है। मानव-धर्मका यह रहस्य समझकर हमें यह बात अपने हृदयमें मजबूतीसे जमा लेनी चाहिये।

मानवीय सुखकी अभिलाषा

हम मनुष्य हैं तो केवल अपनी क्षुद्र वासना या अिच्छाअें पूरी करके अपने देहको सुखी करनेके लिअे नहीं, बल्कि मानव-धर्म पर चलकर सबको सुखी देखनेके लिअे हैं। असीलिअे हमें निर्दोष और सद्गुण-संपन्न होनेकी जरूरत है। निर्दोषताके बिना सद्गुणोंका पूरा विकास नहीं हो सकता, प्रभाव नहीं पड़ता। सद्गुणी होनेका अर्थ ही यह है कि हम दूसरोंके साथ समरस होकर अुनके सुख-दुःखका विचार करें, खुद दुःख और मुसीबत अुठाकर दूसरोंको सुखी करनेकी कोशिश करें तथा अुनके साथ सहानुभूतिका बरताव करें। अैसा करनेसे ही हमारे आत्मभावका विकास होता है। कौटुम्बिक, सामाजिक, राष्ट्रीय — प्रत्येक क्षेत्रमें जहां-जहां दूसरोंके साथ हमारा संबंध हो, वहां सर्वत्र हमारे सद्गुणोंके कारण हमारा आत्मभाव विकसित होता रहना चाहिये। अिस आत्मभावमें ही सारे

सुखका भंडार है। मानव-जीवन अिस सर्वश्रेष्ठ सुखके लिये है। यही मनुष्यकी परमोन्नति है।

अिस विचारसे निराश नहीं होना चाहिये कि अिस सर्वोच्च तक हम जल्दी नहीं पहुंच सकते। अिस विचारसे भी डरनेकी जरूरत नहीं कि अिस अन्तिम स्थितिमें पहुंचने तक हमें भोग दुःख और मुसीबत भुगतनी पड़ेगी। क्योंकि मुक्तिकी योजना अैसी है, परमेश्वरका वचन यह है कि जिस मात्रामें आप मानव-धर्मका अवलम्बन करेंगे, अुस हद तक आप सुखी बनेंगे, जिस मात्रामें आप दूसरोंके लिये काम करेंगे अुसी मात्रामें आपका हृदय शुद्ध होगा तथा आपको शान्ति और आनन्द मिलते रहेंगे। ज्यों-ज्यों आपका मन उदार होता जायगा, त्यों-त्यों आपके हृदयमें सद्गुण प्रकट होते जायेंगे, त्यों-त्यों आपको अनन्त आनन्द होते रहेंगे। अिसके लिये परमोन्नति तक प्रतीक्षा करनेकी जरूरत नहीं, परन्तु अिस मार्गमें हरअेक आगे बढ़नेकी क्रियाको शान्ति, सुख और आनन्द देना चाहिये।

संयममें हीनता न महसूस होनी चाहिये। यदि हम सच्चा सुख प्राप्त करना चाहते हैं, तो ये तमाम बातें हमें सिद्ध करनी ही चाहिये।

मैं आपसे यह आग्रह नहीं करता कि आप दूसरोंके क्रोधको अक्रोधसे या अपनी प्रेमवृत्तिसे जीतें। जितने अूंचे दर्जे तक जानेकी आपकी तैयारी हो, तो आप अुसे जरूर हासिल कीजिये। परन्तु मेरा आपसे जितना आग्रह जरूर है कि आप अपने काम, क्रोध, लोभ, मत्सरता और अुनसे पैदा होनेवाले अपने और दूसरोंके दु:खोंका निवारण अपने संयम, प्रेम, अुदारता, विनय और पश्चात्ताप वगैरा सद्गुणोंसे कीजिये। असके बिना आप मानवताके रास्ते पर नहीं चल सकते और मानवोचित सुखके पात्र भी नहीं हो सकते।

दोषोंका परिमार्जन

विचारशून्यता, दोष, दुष्टता, स्वार्थ वगैराके जरिये क्या आप अपनेको या दूसरोंको कभी सुखी कर सके हैं? आप दूसरोंसे प्रेम, कृतज्ञता, नम्रता, सौजन्य वगैरा सद्गुणोंकी अपेक्षा रखते हैं न? अिस अपेक्षाके अनुसार सब कुछ हो तो आपको आनन्द और सुख होता है न?

आपका यह अनुभव है न कि वह आनन्द और वह सुख दूसरे अिन्द्रियजन्य आनन्द और सुखकी अपेक्षा श्रेष्ठ और दीर्घ काल तक टिकनेवाला होता है? अुस आनन्द और सुखका अनुभव अकेले आपको ही नहीं, परन्तु दूसरोंको भी होता है न? तो फिर औरोंसे आप जैसे आचरणकी आशा रखते हैं और जब अैसा होता है तो आपको आनन्द और सुख होता है, अुसी तरह आप दुनियाके साथ बरताव करें, तो क्या दुनियामें आनन्द और सुखकी वृद्धि नहीं होगी? क्या आपको भी वैसी ही धन्यता अनुभव नहीं होगी? अिस दृष्टिसे जीवनके तमाम अनुभव आपको क्या कहते हैं, क्या बताते हैं और क्या सिखाते हैं, अिसकी थोड़ी जाच करें और विवेकसे काम लें तो आपको जान पड़ेगा और विश्वास हो जायगा कि मनुष्यकी सच्ची श्रेष्ठता मानव-धर्मके अनुसार बरताव करके मानवोचित सुख प्राप्त करनेमें है।

(दैनिक प्रवचनसे)*

२

जीवन अेक महाव्रत

जगतमें अलग-अलग कारणोंसे निर्माण हुअे हमारे अलग-अलग सम्बन्धोंकी जांच करें, तो पता चलता है कि अुनमें से कुछ सर्वथा प्रिय कुछ अप्रिय और कुछ प्रिय-अप्रिय यानी मिश्र स्वरूपके होते हैं। हमें अुनकी प्रियता-अप्रियता अुनके द्वारा होनेवाले सुख-दुःखके कारण लगती है। परन्तु हमारे तमाम सम्बन्ध विवेक-शुद्ध और धर्मशुद्ध हुअे बिना

विवेकयुक्त और धर्म्य सम्बन्ध

हमारी अुन्नति नहीं होगी। केवल स्वार्थके खातिर बांधे गये सम्बन्ध कभी स्थायी रूपसे नहीं टिक सकते। अिस तरह बांधे गये और जा रखे गये सम्बन्धोंसे हमारी अवनति होती है। ये स्वार्थी सम्बन्ध अि किस्मके होते हैं कि आज हैं कल नहीं। अिन सम्बन्धोंमें यह होता कि आज हम जिसकी तारीफ करते हैं, अुसीकी कल हमारा स्वार्थ सर बन्द हो जाय तो निन्दा करते हैं। हमारे सम्बन्ध प्रिय होनेके का यदि अैसा लगता हो कि अुनके कारण हमारा आपसमें प्रेम और विश्व है, तो भी अुन्हें हमें जांच कर देख लेना चाहिये। प्रेमके पैदा होने बढ़नेमें कोअी विशेषता नहीं। सुखके अनुभवके साथ प्रेम पैदा होता और जैसे जैसे यह अनुभव बढ़ता है वैसे वैसे प्रेम भी बढ़ता है। सुखका अनुभव होता है तब हम अेक-दूसरेके लिअे कष्ट सहन क हैं। भावनाके जोशमें भावनाका आनन्द भी हमें अुस समय मिलता आनन्दके आवेशमें भाअी भाअीके लिअे और मित्र मित्रके लिअे तक अुठायें तो अिसमें कोअी विशेषता नहीं। परन्तु किसी कारणसे अे दूसरेके स्वार्थ या सुखमें विरोध पैदा होने पर, मत या जीवन-दृष्टि फर्क पड़ने पर और यह जानने पर भी कि हमारा भाअी या मित्र हम निन्दा करता है, पहलेका प्रेम कायम रखनेमें ही सच्ची विशेषता हमारे मनकी सच्ची परीक्षा अैसे ही वक्त होती है। सुखके समय

और गुस्सेके नष्ट होते ही द्वेष पैदा होना साधारण मनुष्यके स्वभावका लक्षण है। परन्तु विवेकी मनुष्य जानता है कि कौटुम्बिक या कुटुम्बके बाहरका निकट सम्बन्ध जीवनके अन्त तक टिकाये रखनेकी कोशिश करना जीवनकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

प्रेम जोड़नेकी अपेक्षा प्रतिकूल परिस्थितिमें अुसे टिकाये रखना ही अधिक कठिन है। अिसलिअे मतभेद या और किसी कारणसे हमारा प्रेम टूट जानेका जब-जब अवसर आये, तब-तब अपनी पहलेकी प्रेम-भावनाको प्रमाण मानकर — अुसे याद करके — अपनी सारी सात्त्विकता अिकट्ठी करके भी अुसी भावनाको दृढ़ रखनेका हमें प्रयत्न करना चाहिये। अगर यह बात मनुष्यके चित्तमें पूरी तरह जम जाय कि अेक बार जोड़ा हुआ प्रेम-सम्बन्ध 'स्वार्थके कारण टूटनेमें अपनी सत्त्वहानि है, तो कोअी भी सम्बन्ध जोड़ते समय, बढ़ाते समय या तोड़ते समय वह विवेक और सावधानीसे काम लेगा। जिस सम्बन्धमें प्रेम, विश्वास अेकदम बढ़ते हैं और फिर अेकदम या कालान्तरमें घट जाते हैं, अुस सम्बन्धमें स्वार्थ, भोलापन, भावुकता, अुतावली, अविवेक वगैरा दोष अेक या दोनों तरफ अवश्य होने चाहिये। अिसी तरह जिस सम्बन्धमें प्रेम, विश्वास वगैराकी वृद्धि सहवास, प्रसंग, आपत्ति और अनुभवके कारण धीरे-धीरे होती है, अुस सम्बन्धमें विवेक और सात्त्विकता होनी चाहिये अिसमें शक नहीं।

निरहंकारिता और संतोषसे कष्ट सहन करना ही धर्म है

यह सारा निरूपण ध्यानमें रखकर आप अपने बारेमें विचार कीजिये। अपने जीवन, बरताव और स्वभावकी जांच कीजिये और ये या अिनके जैसे दूसरे कोअी दोष आपमें हैं या नहीं यह खोज लीजिये। मैंने शुरूमें ही आपसे कहा है कि जगतके साथ हमारे सम्बन्ध धर्म्य होने चाहिये। वे अैसे हों और अुन्हें अैसे ही रखना और टिकाना हमें आता हो, तो ही हमारी अुन्नति हो सकती है। स्वार्थी सम्बन्ध कभी धर्म्य नहीं हो सकते। हरअेक आदमी सुखकी अिच्छा करता है, परन्तु यह बात आप न भूल जाअिये कि धर्मके बिना मनुष्योचित सुख कभी किसीको नहीं मिल सकता। समाजमें अेक-दूसरेके लिअे

कष्ट सहन किये बिना मानव-जीवन चलना ही असम्भव है। सद्भावनासे, अुदात्त बुद्धिसे और सन्तोषसे कष्ट सहन करनेमें सच्चा धर्म है। जीवनमें अहंकारसे हम जितना आचरण करते या कष्ट सहते हैं वह सब अधर्म है। अिसलिअे हम जो कुछ कर्तव्य-बुद्धिसे समझकर करते हैं और दूसरोंके लिअे तकलीफ अुठाते हैं, अुसमें हमें अहंकार न होना चाहिये। क्योंकि हमारा अहंकार जिसके लिअे हमने कुछ कष्ट सहा होगा अुसे दुःख देगा, अुससे पश्चात्ताप करायेगा और हमारे और अुसके सम्बन्धमें कटुता पैदा करेगा। अहंकार कभी भी दूसरे दोषोंसे अछूता नहीं रह सकता। हमने दूसरे पर अुपकार किया है, यह भावना अहंकारके साथ रहेगी ही। अुपकारकी भावनाके पीछे लोभ होगा ही, और लोभकी जड़में बदलेकी — कमसे कम स्तुतिकी — अिच्छा तो स्वाभाविक ही होगी। अहंकारके साथ रहनेवाले अैसे अनेक दोषोंके कारण हमारे धर्मका तेज नष्ट होता है। अिसलिअे अुन्नत होना हो, धर्मनिष्ठ रहना हो, तो हमें केवल सद्गुणोंके और मानवताके अुपासक बनना चाहिये।

अहंकारी व लोभी मनुष्यके बारेमें सावधानी

कोअी भी स्वाभिमानी मनुष्य अहंकारी व लोभी मनुष्यके अुपकारके नीचे नहीं आना चाहता। कभी अैसा प्रसंग आ जाय, तो अुसके लिअे अुसे पछतावा हुअे बगैर नहीं रहता। अिसलिअे आपको अहंकारी और लोभी मनुष्यसे सावधान रहना चाहिये। क्योंकि वे दूसरोंके अपने पर किये गये बड़े-बड़े अुपकार तो झट भूल जाते हैं, परन्तु दूसरोंके लिअे अुन्हें जरा भी कष्ट सहन करना पड़ा हो तो अुसमें अुन्हें अपना बड़प्पन और अुदात्तता दिखाअी देती है। वे कभी यह महसूस नहीं करते कि सामनेवाले द्वारा दिखाअी गअी कहीं बड़ी कृतज्ञता या दिये गये कहीं बड़े बदलेसे अुस अुपकारकी भरपाअी हो गअी है। अपने किये हुअे छोटेसे अुपकारको बड़ा रूप देकर सबके सामने कहते फिरनेकी अुनकी आदत होती है। अुनकी अिस आदतका जब आपको अपने विषयमें अनुभव होगा, तब आपको लगेगा कि जिस अवसर पर अुन्होंने आपको मदद दी, अुसमें चाहे जितना दुःख भोगना पड़ता तो भी आप भोग लेते, लेकिन अुस समय अिनकी मदद न

सी होती तो अच्छा होता। अुस समयके अुस दुःखका — अुसके कारणोंका — सृष्टिके नियमानुसार कभी न कभी तो अन्त आता ही। लेकिन अुनके अहंकार और लोभका कोअी अन्त नहीं। मानव-जीवन सबके परस्पर सहयोग, सहानुभूति, अुदारता वगैरा अनेक सद्गुणों पर चलता है। अुनके बिना जीवन और व्यवहार चल ही नहीं सकता, यह सीधी-सादी बात भी अहंकारी और लोभी लोग नहीं जानते। अुनका स्वभाव मानव-धर्मसे अुलटा होने पर भी अुनके आभारके नीचे दब जानेके बाद अपनी कृतज्ञता-बुद्धिके कारण आप अुनके स्वभावका विरोध भी नहीं कर सकेंगे। अुनके अुपकारके नीचे दब जानेके कारण आप पश्चात्ताप और कठिनाअीकी हालतमें फंस जायंगे। अिसलिअे शुरूसे ही अिस विषयमें सावधान रहना अच्छा है। हमारे पिताजी अैसे अवसर पर अेक सूचक आर्या बोला करते थे :

> गुणवन्ताच्या घरी याचना विफलहि बरवी वाटे।
> नको नको ती नीचापाशी होताहि फल मोठें।।

(गुणवानसे की हुअी याचना निष्फल जाय तो भी वह अच्छी है; परन्तु नीच मनुष्यसे बड़ा फल मिलता हो तो भी याचना न करनी चाहिये।) सार यह कि विवेकी मनुष्यको अपने सत्कर्म या सद्गुणके लिअे अहंकार न करना चाहिये, न लोभ ही करना चाहिये। अिसी तरह अहंकारी और लोभी मनुष्यके अुपकारके नीचे भी कभी नहीं आना चाहिये।

जीवन-संबंधी लापरवाही

हमारा मुख्य सवाल यह है कि हमारे सारे संबंध विवेक-शुद्ध और धर्मशुद्ध किस तरह बनें और रहें। सम्बन्धोंको अैसा बनाना और रखना मानव-जीवनका महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। यह सोचे-समझे बिना कि हमारे कौनसे दुर्गुण बड़े और किस तरह अिस कर्तव्यमें बाधक बनते हैं और वे बाधक न बनें अिसके लिअे हमें क्या करना चाहिये, हमारा मुख्य सवाल हल नहीं हो सकता। मानव-जीवन सामूहिक होनेके कारण अुसमें हमारे सम्बन्ध सहज ही परस्पर गुंथे रहेंगे। यदि हम सबका अेक-दूसरेके साथ सद्भावना-युक्त और विवेकयुक्त सहयोग न हो,

रूपमें प्रकट होती जायगी, वैसे-वैसे हमारे 'आत्मभाव' का विकास होता जायगा और अुसका घेरा विशाल बनता जायगा।

अिस मानवताका प्रारंभिक गुण दया है। किसी भी किस्मका पूर्व-सम्बन्ध न होने पर भी दूसरेके दुःखके अवसर पर जो कोमल भाव मनुष्यके मनमें पैदा होता है और अुसे विह्वल कर देता है अुसीका नाम दया है। यह दया ही मानव-धर्मकी जड़ है। अिसीलिअे सन्त तुलसीदास कहते हैं

> दया धर्मका मूल है, पापमूल अभिमान।
> तुलसी दया न छाड़िये जब लग घटमें प्रान॥

दयासे धर्म और अहंकारसे पाप यानी अधर्म फैलता है। अिस अेक सूत्रमें मानवीय धर्म-अधर्मके कितने महान सिद्धान्त भरे हैं! दयासे शुरू होनेवाली मानवताको अपनी सिद्धिके लिअे अेकके बाद अेक अनेक गुणोंका आसरा लेना पड़ता है। अपने शरीर तक ही मर्यादित और संकुचित 'आत्मभाव' दयाके कारण पीड़ित व्यक्ति तक जा पहुंचा कि अुसे स्थिर और दृढ़ करनेके लिअे मनुष्यको अपने शरीर-सुखके बारेमें थोड़ा-बहुत संयम करना पड़ता है। अिसके लिअे अुसे कष्ट सहन करना पड़ता है, पुरुषार्थ करना पड़ता है। पीड़ित व्यक्ति और मैं खुद — अिन दोनोंमें से कष्ट सहन कर सके अैसा कौन है यह विवेकपूर्वक देखकर मनुष्यको निर्णय करना पड़ता है। अिस प्रकार संयम, त्याग, सहनशीलता, विवेक, अुदारता वगैरा गुण क्रमानुसार अेकके बाद अेक मनुष्यको स्वीकार करने पड़ते हैं। अिसी तरह अुसकी मानवता बढ़ती और प्रगट होती रहती है। मानवताका यह सहज क्रम है। अिस क्रमको समझकर बरताव करेंगे, तो आपको अपने मार्गमें सिद्धि मिले बिना नहीं रहेगी।

यह मार्ग सिद्ध करनेके लिअे अैसी धारणा और श्रद्धा आपको रखनी चाहिये कि जीवन अेक महाव्रत है। अिसके लिअे आपको अपनी संकुचित कौटुम्बिक भावना बदलनी होगी, और अुस भावनाका क्षेत्र आपको भरसक विशाल और शुद्ध बनाना होगा। जिस जिसको आपकी शक्ति और बुद्धिकी आवश्यकता हो, जो आपकी मददके बिना

महाव्रतकी धारणा

तो भिन्न सम्बन्धोंका सरल, व्यवस्थित और सन्तोषकारक रहना सम्भव नहीं। अुनमें सहयोग, व्यवस्था, अनुशासन, सद्भाव और परस्पर मेलका कितना महत्त्व है और अिसके लिअे हममें से हरअेकमें मानवीय सद्गुण होना कितना जरूरी है, यह अच्छी तरह न समझनेके कारण ही हमारे पारस्परिक सम्बन्ध बहुत पेचीदा बनकर हम सबके लिअे दुःखदायी हो जाते हैं। हमारी वृत्तियां और अिच्छायें धर्म्य हैं या अधर्म्य, यह देखे बिना अुन्हींको हम महत्त्व देते हैं और अुन्हें पूरा करनेके खातिर कभी खुशामद तो कभी निन्दा, कभी दंभ तो कभी धूर्तता आदि दुर्गुणोंका आश्रय लेते हैं। विवेक और संयम न होनेके कारण हम क्रोधका दमन प्रेम और क्षमासे करनेके बजाय मत्सर और कपटसे करनेकी कोशिश करते हैं। हम सभी अिस मामलेमें लगभग अेकसे हैं, अिसलिअे हम सबने मिलकर अपना खुदका और दूसरोंका संसार दुःखमय बना दिया है। अिसका कारण यह है कि हम मानव-जीवनका मूल्य नहीं समझते। हम मिली हुअी अन्तर्बाह्य साधन-सम्पत्तिका विचार करके मानवताके अनुरूप और मानव-मनको शोभा देनेवाली महत्त्वाकांक्षा रखने लगेंगे, तो आजके जैसे क्षुद्र जीवनसे हमें कभी समाधान नहीं होगा।

मनुष्य विवेक करने लगे, अपने और दूसरेके पूर्व अनुभव ध्यानमें रखकर अुनसे जीवनके लिअे अुचित सार निकालकर सबक सीखता जाय, अुस सबकका वर्तमान और भविष्यमें ठीक अुपयोग करनेके लिअे संयम रखने और पुरुषार्थ करनेकी कला साध ले, तो यह समझना चाहिये कि अुसमें मनुष्यता आने लगी है और वह मानव-जीवनका महत्त्व समझने लगा है। अपनी आवश्यकताओं और अिच्छाओंकी तरह वह औरोंकी आवश्यकताओं और अिच्छाओंका विचार करने लगे और अिसके लिअे अपनी अिच्छाओंको रोककर दूसरोंके लिअे सन्तोषपूर्वक कष्ट सहने लगे, तो वह मानवताके मार्ग पर लगा हुआ कहा जा सकता है। मानवताका अर्थ ही दूसरोंके प्रति समभाव है। समभावके आचरणसे ही अपने शरीर तक मर्यादित लगनेवाला 'आत्मभाव' दुनियामें व्यापक होकर बढ़ने लगता है। जैसे-जैसे हमारी मानवता बढ़ेगी, वैसे-वैसे वह सद्गुणोंके

आत्मभावका विकास

रूपमें प्रकट होती जायगी, वैसे-वैसे हमारे 'आत्मभाव' का विकास होता जायगा और अुसका घेरा विशाल बनता जायगा।

अिस मानवताका प्रारम्भिक गुण दया है। किसी भी किस्मका पूर्व-सम्बन्ध न होने पर भी दूसरेके दुःखके अवसर पर जो कोमल भाव मनुष्यके मनमें पैदा होता है और अुसे विह्वल कर देता है अुसीका नाम दया है। यह दया ही मानवताकी जड़ है। अिसीलिअे सन्त तुलसीदास कहते हैं

> दया धर्मका मूल है पापमूल अभिमान।
> तुलसी दया न छांडिये जब लग घटमें प्रान॥

दयासे धर्म और अहंकारसे पाप यानी अधर्म फैलता है। अिस अेक सूत्रमें मानवीय धर्म-अधर्मके कितने महान सिद्धान्त भरे हैं! दयासे शुरू होनेवाली मानवताको अपनी सिद्धिके लिअे अेकके बाद अेक अनेक गुणोंका आसरा लेना पड़ता है। अपने शरीर तक ही मर्यादित और संकुचित 'आत्मभाव' दयाके कारण पीड़ित व्यक्ति तक जा पहुंचा कि अुसे स्थिर और दृढ़ करनेके लिअे मनुष्यको अपने शरीर-सुखके बारेमें थोड़ा-बहुत संयम करना पड़ता है। अिसके लिअे अुसे कष्ट सहन करना पड़ता है, पुरुषार्थ करना पड़ता है। पीड़ित व्यक्ति और मैं खुद — अिन दोनोंमें से कष्ट सहन कर सके अैसा कौन है यह विवेकपूर्वक देखकर मनुष्यको निर्णय करना पड़ता है। अिस प्रकार संयम, त्याग, सहनशीलता, विवेक, अुदारता वगैरा गुण प्रसंगानुसार अेकके बाद अेक मनुष्यको स्वीकार करने पड़ते हैं। अिसी तरह अुसकी मानवता बढ़ती और प्रगट होती रहती है। मानवताका यह सहज क्रम है। अिस क्रमको समझकर बरताव करेंगे, तो आपको अपने मार्गमें सिद्धि मिले बिना नहीं रहेगी।

यह मार्ग सिद्ध करनेके लिअे अैसी धारणा और श्रद्धा आपको रखनी चाहिये कि जीवन अेक महाव्रत है। अिसके लिअे आपको अपनी

महाव्रतकी धारणा

संकुचित कौटुम्बिक भावना बदलनी होगी, और अुस भावनाका क्षेत्र आपको भरसक विशाल और शुद्ध बनाना होगा। जिस जिसको आपकी शक्ति और बुद्धिकी आवश्यकता हो, जो आपकी मददके बिना

रुक गया हो, आपको लगना चाहिये कि अुसे अुदारतासे सहायता देना हमारा कर्तव्य है। कर्तव्य करनेमें जहां आपकी शक्ति कम पड़ जाय, वहां यह समझ लीजिये कि आपकी शक्तिकी मर्यादा आ गअी; लेकिन कर्तव्यकी मर्यादा पूरी हुअी न समझिये। आप यह समझिये कि हमारा कर्तव्य विशाल है, हमारा क्षेत्र अपार है, परन्तु हमारी शक्ति और बुद्धि मर्यादित है।

जीवनरूपी महाव्रतको सांगोपांग पूरा करनेके लिअे आपको समदृष्टि रखनी होगी। आपके मनमें यह विचार या चिन्ता नहीं होनी चाहिये कि हमारे कर्तव्यका क्षेत्र छोटा है या बड़ा, अुसमें बाहरी कोअी लाभ है या हानि, अथवा प्रतिष्ठा है या अप्रतिष्ठा। आपको अितना ही देखना चाहिये कि वह कार्य व्यक्ति और समाजके कल्याणके लिअे जरूरी है या नहीं। अिसके लिअे आपको कभी तो राष्ट्रीय अथवा धार्मिक कार्यके व्यापक क्षेत्रमें से वैयक्तिक क्षेत्रमें अुतरना पड़ेगा, और कभी वैयक्तिक क्षेत्रसे निकलकर महान राष्ट्रीय कार्यके साथ सम्मिलित होना पड़ेगा। परन्तु अिन दोनों कार्योंमें आपकी दृष्टि और हेतु शुद्ध और कर्तव्य-परायण ही होने चाहिये। किसी भी कार्यमें आपकी अुदारता, नि:स्वार्थता, कार्य-कुशलता और निरहंकारिता तथा हरअेक कार्यसे अुत्पन्न होनेवाली अिष्ट सिद्धिको अुस कार्यकी अपेक्षा अधिक व्यापक और अधिक अुच्च क्षेत्रमें समर्पण करनेकी आपकी दीर्घदृष्टि — ये सब गुण आपमें समान रूपसे होने चाहिये। आपकी अपनी शुद्धिका मापदंड किसी भी कार्यमें अेकसा और श्रेष्ठ प्रकारका होना चाहिये। हरअेक छोटे-बड़े कर्तव्यके मौके पर अपनी मानवता ही बढ़ानेकी आपकी कोशिश होगी, तो किसी भी मौके या सम्बन्धसे अपनी मान-प्रतिष्ठा अथवा दूसरी क्षुद्र अभिलाषा सिद्ध करनेकी कल्पना ही कभी आपके मनमें नहीं आयेगी। अिस व्रतकी साधनामें आपको कभी-कभी बहुत कष्ट सहना पड़ेगा। केवल कर्तव्या-चरण पर जोर देकर अपनी मानवता साधनेके लिअे जिनके हितके खातिर आप अपने देह-सुख, स्वास्थ्य, मान और प्रतिष्ठाका त्याग करते होंगे और प्रसंगवश कअी ओरसे असह्य शारीरिक और मानसिक कष्ट चुपचाप सहन करते होंगे, अुस वक्त भी शायद अुन्हींकी तरफसे आपको

चलनेका आपका निश्चय और भी प्रबल होगा। आपका युत्साह बढ़ता रहेगा। अुसके सामने तमाम संकट, तमाम रुकावटें आपको तुच्छ मालूम होंगी। ज्यों-ज्यों आप अिस मार्गमें आगे बढ़ेंगे, त्यों-त्यों आपकी सात्विकतामें शुद्धता और तेजस्विता आती जायगी। आपकी बुद्धि प्रखर होगी। सद्विचार और सद्वर्तन आपका स्वभाव बन जायगा। परमात्माके प्रति आपकी निष्ठा बढ़ती जायगी। आत्म-विश्वास बढ़ता जायगा। फिर यह महाव्रत आपको महाव्रत जैसा नहीं लगेगा। अुसकी कठिनता जाती रहेगी। यह व्रत ही आपका सहज जीवन बन जानेके बाद, अुसमें धन्यता, कृतार्थता और प्रसन्नता महसूस होनेके बाद अुसमें कठिनता कहांसे दिखाओ देगी? अैसी स्थितिमें आपको यही लगेगा कि दुनियाके हरअेक व्यक्तिके साथ आपका सम्बन्ध विवेकशुद्ध, धर्मशुद्ध और न्यायशुद्ध है। व्यक्तिगत, कौटुम्बिक, सामाजिक और राष्ट्रीय — हरअेक सम्बन्ध और क्षेत्रमें आपको अपने लिअे अेकसी प्रियताका ही अनुभव होगा। माता, पिता, पति, पत्नी, भाओी, बहन, चाचा, मामा, पुत्र, पुत्री, पड़ोसी, आप्तजन, मित्र या दूसरे कोओी — जैसा भी आपका सम्बन्ध होगा वह पवित्र, अुदात्त और आदर्शरूप ही जान पड़ेगा। यह महाव्रत जिस माताने धारण किया होगा, वह माता आदर्श माता बनेगी और पिता आदर्श पिता होगा। पुत्र हो तो अैसा ही महाव्रती होना चाहिये, मित्र हो तो अैसा ही होना चाहिये — अिस प्रकार हरअेक सम्बन्धके बारेमें आपके लिअे अेक ही तरहकी राय बनेगी। अिस प्रकार जीवनमें सभी ओरसे सिद्धि मिलनेके कारण आप घरमें प्रिय, समाजमें मान्य और अपनी दृष्टिसे धन्य और कृतकृत्य होंगे। अिस सिद्धिके लिअे ही मानव-जीवन है। यह सिद्धि प्राप्त कर लेनेके बाद जीवनमें और कुछ सिद्ध करनेको रहता ही नहीं।

(दैनिक प्रवचनसे)

गांधी-विचार-मालाकी पुस्तकें

१ पंचायत राज	० ३०
२. संतति नियमन : सही मार्ग और गलत मार्ग	० ४०
३ शाकाहारका नैतिक आधार	० २५
४ गीताका सन्देश	० ३०
५ विश्वशांतिका अहिंसक मार्ग	० ४०
६ समाजमें स्त्रियोंका स्थान और कार्य	० २५
७. साम्यवाद और साम्यवादी	० २०
८. मेरा समाजवाद	० ४०
९. गीता — मेरी नजरमें	० ३५
१० सहकारी खेती	० २०
११. शरीर-श्रम	० २५
१२. ग्रामोद्योग	० ३०
१३. संरक्षकताका सिद्धान्त	० ३०
१४. भारतकी खुराककी समस्या	० ५०
१५. शराबबन्दी होनी ही चाहिये	० २५

डाकखर्च अलग

नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद-१४

प्रेमपन्थ

योजन २

योजक
वालजी गोविन्दजी देसाअि

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

प्रेमपन्थ

योजन २

योजक
[illegible]ी गोविन्दजी देसाई
अनुवादक
सोमेश्वर पुरोहित

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद